दक्षिण एशिया में प्रजातीय समस्या : पाकिस्तान के विशेष सन्दर्भ में

डॉ0 कृष्ण कुमार सिंह*

सारांश

प्रजातीय समस्या दक्षिण एशियाई देशों की एक प्रमुख सामाजिक–राजनीतिक समस्या है। पाकिस्तान प्रजातीय एवं भाषायी रूप से बहुत ही जटिल देश है। पाकिस्तान की विविधतापूर्ण प्रजातीय–भाषायी स्थिति को देखते हुए वहाँ पर सुशासन एवं लोकतंत्र की सफलता हेतु शक्तिशाली संघीय व्यवस्था बेहतर विकल्प सिद्ध होती परन्तु दुर्भाग्य से वहाँ पर आरम्भ से ही केन्द्रीकरण की प्रवृति मजबूत रही। परिणाम स्वरूप वहाँ पर विभिन्न प्रजातीय आन्दोलन आरम्भ हुए। पख्तून आन्दोलन का लक्ष्य व्यापक स्वायत्तता है। बलूच राष्ट्रीय आन्दोलन वास्तव में अलगाववादी प्रजातीय आन्दोलन है। बलूचों का सामाजिक–आर्थिक बहिर्वेशन इसका मुख्य कारण है। मुहाजिर आन्दोलन समान अधिकार एवं सामाजिक न्याय पर आधारित है। सिंध की प्रांतीय सरकार एवं केन्द्र सरकार में अल्प प्रतिनिधित्व तथा सामाजिक–आर्थिक बहिर्वेशन आदि ने सिंधी लोगों में सिंधी राष्ट्रवाद की भावना के विकास में सहायता की। पाकिस्तान में प्रजातीय भेदभाव एवं शोषण का दुष्परिणाम यह निकला कि सन् 1971 में पाकिस्तान का विभाजन हो गया और बांग्लादेश अस्तित्व में आया। पाकिस्तान में प्रजातीय समस्या ने वहाँ पर राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया एवं लोकतंत्र को बहुत अधिक नुकसान पहुँचाया और आर्थिक विकास को बाधित किया। अन्य दक्षिणी एशियाई देशों–भारत, बांग्लादेश, श्रीलंका एवं नेपाल में भी प्रजातीय समस्या ने समय–समय पर गम्भीर रूप धारण किया।

संकेत शब्द : दक्षिण एशिया, प्रजातीय आन्दोलन, पाकिस्तान, बहिर्वेशन

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध पत्र अध्ययन विषय से सम्बन्धित तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण पर आधारित है। इसमें दक्षिण एशियाई देशों विशेष रूप से पाकिस्तान के प्रजातीय संरचना, विभिन्न प्रजातियों के आन्दोलनों तथा पाकिस्तान के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विकास पर प्रजातीय समस्या के प्रभाव को विस्तार से जानने का प्रयत्न किया गया है। यह द्वितीयक स्रोतों पर आधारित शोध पत्र है। इसमें विभिन्न प्रामाणित पुस्तकों एवं शोध पत्रिकाओं इत्यादि का उपयोग किया गया है। यह वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित शोध पत्र है।

अध्ययन का उद्देश्य

अध्ययन का उद्देश्य दक्षिण एशिया, विशेषकर पाकिस्तान में प्रजातीय समस्या के विभिन्न आयामों को उद्घाटित करना और इसका पाकिस्तान में राष्ट्र निर्माण एवं सामाजिक – आर्थिक विकास तथा लोकतांत्रिक संस्थाओं पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण करना है।

दक्षिण एशियाई देशों के समाजों की एक प्रमुख विशेषता उनका बहुप्रजातीय, बहुधार्मिक, बहुभाषी एवं बहुसांस्कृतिक होना है। प्रजातीय समस्या, दक्षिण एशियाई देशों की एक प्रमुख सामाजिक एवं राजनीतिक समस्या है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल एवं श्रीलंका इत्यादि क्षेत्र के सभी प्रमुख देश इस समस्या से कम–अधिक रूप में पीड़ित हैं।[1] भारत में पंजाब समस्या, कश्मीर समस्या, नागा समस्या, द्रविड़ आन्दोलन इत्यादि प्रजातीय समस्या के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं। पाकिस्तान एवं श्रीलंका में प्रजातीय समस्या सर्वाधिक गंभीर है। इन देशों में प्रजातीय समस्या का अंदाजा इस बात से ही लगाया जा सकता है कि इसने इन देशों को विभाजन के कगार पर पहुंचा दिया था, साथ ही बांग्लादेश के अस्तित्व में आने का प्रमुख कारण भी तत्कालीन पाकिस्तान में व्याप्त प्रजातीय अन्याय एवं अत्याचार था। नेपाल में भी प्रजातीय समस्या बहुत संवेदनशील है। मधेसी आन्दोलन एवं देशज राष्ट्रीयताओं के आन्दोलन इसके प्रमुख उदाहरण हैं। बांग्लादेश भी प्रजातीय समस्या से पीड़ित है। इस क्षेत्र के देशों में प्रजातीय समस्या ने न केवल वहाँ पर कानून–व्यवस्था की

*असिस्टेन्ट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, राजनीतिशास्त्र विभाग, श्री बजरंग स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दादर आश्रम, सिकन्दरपुर, बलिया

समस्या उत्पन्न की बल्कि इन देशों के सामाजिक–आर्थिक विकास को गंभीर रूप से बाधित किया।

भारत के धार्मिक विभाजन के फलस्वरूप अगस्त 1947 में पाकिस्तान एक स्वतंत्र राज्य के रूप में अस्तित्व में आया। पाकिस्तान विश्व के उन देशों में से एक है जहाँ पर प्रजातीय एवं भाषायी रूप से बहुत जटिलता है।[2] वहाँ पर वर्तमान में मुख्य रूप से पाँच प्रजातीय-भाषायी समूह हैं -पंजाबी, सिंधी, बलूच, पख्तून या पश्तुन एवं मुहाजिर। इसका प्रत्येक प्रान्त एक प्रजातीय-भाषायी समूह से सम्बन्धित है। पंजाब पंजाबियों से, सिंध सिंधियों से, बलूचिस्तान बलूचियों से और खैबर पख्तूनख्वा पश्तूनों से। कुछ में अन्य महत्त्वपूर्ण प्रजातियाँ भी रहती हैं और पख्तून एवं पंजाबी पूरे देश में पाये जाते हैं। पाकिस्तान की आदिवासी आबादी संघीय प्रशासनिक कबाइली क्षेत्र एवं आजाद कश्मीर में केन्द्रित है। सन् 1971 में पाकिस्तान के विभाजन एवं बांग्लादेश के अस्तित्व में आने के पहले बंगाली प्रजाति भी पाकिस्तान में रहती थी। पाकिस्तान की इस विविधतापूर्ण प्रजातीय-भाषायी स्थिति को देखते हुए यहाँ एक सशक्त लोकतंत्र की स्थापना हेतु एक मजबूत संघात्मक व्यवस्था बेहतर होती परन्तु पाकिस्तान में शुरू से ही केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति देखी गई। यद्यपि जिन्नाह ने 1935 के भारत शासन अधिनियम का यह कहकर विरोध किया था कि यह बहुत केन्द्रवादी है परन्तु पाकिस्तान बनने के बाद, एकमात्र सत्ता का केन्द्र होने के बावजूद, उन्होंने एकात्मक शासन को वरीयता दी। पाकिस्तान में प्रजातीय आन्दोलनों एवं प्रजातीय संघर्ष का प्रमुख कारण वहां फैला हुआ व्यापक प्रजातीय एवं सामाजिक अन्याय है। प्रजातीय शांति को बनाये रखने के लिए सामाजिक –आर्थिक न्याय आवश्यक है। धर्म ही संघर्ष का आधारभूत कारण नहीं है, बल्कि दमन एवं अन्याय भी इसके लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं। प्रजातीय आन्दोलनों ने न केवल पाकिस्तान को विभाजन की त्रासदी से दो–चार कराया वरन् लोकतांत्रिक सरकारों की विदाई की भी भूमिका तैयार की। इन आन्दोलनों से कानून–व्यवस्था तथा राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता और सुरक्षा को खतरा बताकर सेना ने सत्ता हथिया ली। सामाजिक न्याय की स्थापना करके ही पाकिस्तान में प्रजातीय समस्या का समाधान एवं लोकतन्त्र को मजबूत किया जा सकता है।

खैबर पख्तूनख्वा प्रान्त में मुख्यतः पख्तून प्रजाति निवास करती है। यह देश की कुल आबादी का लगभग 13 प्रतिशत है जबकि अपने प्रान्त में यह 70 से 80 प्रतिशत के मध्य में है। पख्तून नेता एवं जनता पाकिस्तान के विचार से सहमत नहीं थे, वह अविभाजित भारत का भाग रहना चाहते थे। पख्तूनों को उनकी इच्छा के विरूद्ध जबरदस्ती पाकिस्तान में शामिल किया गया था।[3] लेकिन जब पाकिस्तान बन गया तो धीरे–धीरे उन्होंने पाकिस्तानी राष्ट्रवाद को स्वीकार कर लिया। पंजाबी तत्व के बाद सेना में दूसरे स्थान पर इन्हीं की भागीदारी है। सेना के माध्यम से पख्तूनों ने जमीन का व्यापार, परिवहन एवं दूसरे आर्थिक क्षेत्रों में पूंजी निवेश कर अपनी स्थिति मजबूत कर ली है। अनेक समयों पर कुछ पख्तूनों ने सेना एवं नौकरशाही में सर्वोच्च पद को प्राप्त किया है। 1947–58 तथा 1973–77 की अवधि में पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत में पख्तूनों का आन्दोलन चला। 1947 में निर्वाचित सरकार को हटाने से एवं 1973 में चुनी हुई प्रान्तीय सरकार के कामकाज में गवर्नर द्वारा दखल दिये जाने की वजह से आन्दोलन शुरू हुए। पख्तून आन्दोलन व्यापक स्वायत्तता की मांग करता है।

बलूच राष्ट्रीय आन्दोलन बलूचिस्तान प्रान्त में चल रहा है।[4] बलूचिस्तान पाकिस्तान का सबसे बड़ा प्रान्त है जो कि उसके लगभग 43 प्रतिशत भाग का प्रतिनिधित्व करता है। 1998 की जनगणना के अनुसार यहाँ सम्पूर्ण जनसंख्या का लगभग 5 प्रतिशत भाग निवास करता है। बलूच एक जनजाति समुदाय है जो 17 समूहों में संगठित है।[5] बलूच पाकिस्तान में बलूचिस्तान के क्षेत्र में ज्यादा केन्द्रित हैं। इनकी जनसंख्या पाकिस्तान में लगभग 40 लाख तक है। इस जनसंख्या का लगभग एक–तिहाई भाग सिंध, पंजाब तथा पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में निवास करता है। 1981 की जनगणना के अनुसार बलूचिस्तान की 4.3 मिलियन की जनसंख्या में बलूच 57 प्रतिशत, पख्तून 28 प्रतिशत, सिंधी 8 प्रतिशत एवं 7 प्रतिशत पंजाबी थे।

बलूच राष्ट्रीय आन्दोलन की जड़ें स्वतंत्रता पूर्व की घटनाओं में हैं। 1947 से पहले बलूचिस्तान का अधिकतर भाग कलात रियासत में था। कलात के अंतिम शासक अहमद यार खान ने 1930 के दशक में यह स्पष्ट किया था कि वह कलात की स्वतंत्रता के समर्थक हैं तथा यह कि कलात एवं नेपाल की स्थिति एक जैसी है। 1947 में अहमद यार खान ने कलात की स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। दिसंबर 1947 में कलात की असेंबली में घोस बख्श बिंजेजो ने कहा था – ''हम मुस्लिम हैं इसलिए हमें पाकिस्तान में शामिल हो जाना चाहिए नहीं तो अफगानिस्तान एवं ईरान को भी पाकिस्तान में विलीन हो जाना चाहिए ..... हम सार्वभौम समानता के आधार पर उस देश से हाथ मिलाने को तैयार हैं, पर विलय के लिए कतई नहीं..... यदि हमें इसके लिए मजबूर किया गया तो हर बलूच बच्चा राष्ट्रीय आजादी की हिफाजत के लिए अपनी जान निछावर कर देगा।''[6] 4 जनवरी 1948 को कलात के उच्च सदन ने घोषणा की कि – ''यह सदन पाकिस्तान के साथ विलय के प्रस्ताव को मंजूर नहीं करता क्योंकि इससे अलग बलूच राष्ट्र का वजूद खतरे में पड़ जायेगा।''[7] कलात की स्वतंत्रता की घोषणा को अस्वीकार करते हुए पाकिस्तान ने अप्रैल 1948 को फौज की सहायता से कलात पर कब्जा कर जबरदस्ती उसका विलय कर

लिया। कलात के शासक के भाई द्वारा इसका विद्रोह के साथ विरोध किया गया जिसे दबा दिया गया।

कलात के पाकिस्तान में विलय को बलूच राष्ट्रवादी कभी दिल से स्वीकार नहीं कर पाए। इसलिए 1948, 1958–69, 1973–77 तथा 2005 से अब तक जारी, की अवधि में बलूच विद्रोहों का दौर चला। 2016 में पाकिस्तानी सरकार एवं बलूच अलगाववादियों के मध्य समझौते के बावजूद वहाँ पर अलगाववादी प्रजातीय आन्दोलन की आग बुझी नही है। अगस्त–सितंबर 1974 में पाकिस्तानी सेना ने विद्रोह को दबाने के लिए लड़ाकू विमानों से बमबारी की।[8] 1973–77 की अवधि में 55000 बलूच गुरिल्लाओं तथा 70000 पाकिस्तानी सैनिकों के मध्ययुद्ध चलता रहा जिसमें 5000 से अधिक बलूच एवं 3500 सेना के जवान मारे गये। 2005 में पुनः बलूचों का विद्रोह शुरू हो गया जो बहुत व्यापक एवं हिंसक हो गया है। अगस्त 2006 में बुजुर्ग बलूच कबाइली नेता नवाब अकबर बुग्ती की मिलिट्री एक्शन में फौज द्वारा हत्या ने बलूच राष्ट्रवाद को एक प्रतीक दे दिया।[9] बुग्ती की मौत ने बलूचों में असंतोष एवं बगावत की आग को और भड़का दिया है।[10] इससे उत्पन्न हालात में यह अनुमान लगाया जा रहा है कि बलूचिस्तान दूसरा बांग्लादेश बनने की राह पर जा रहा है।

बलूच समस्या में अलगाववाद के साथ उनका सामाजिक–आर्थिक बहिर्वेशन महत्त्वपूर्ण रहा है। बलूचिस्तान पाकिस्तान का सबसे अधिक हाशिये पर स्थित प्रान्त है। यहां पर बहुत कम सामाजिक–आर्थिक विकास हुआ है और रोजगार के अवसर बहुत कम हैं।[11] साक्षरता की दर लगभग 24 प्रतिशत है तथा केवल 5 प्रतिशत के आसपास महिलाए साक्षर हैं। 85 प्रतिशत आबादी गांवों में रहती है जो सड़कों से जुड़े नहीं हैं। यद्यपि प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से यह क्षेत्र बहुत सम्पन्न है। यहाँ तेल, गैस, सोना और कोयले का अपार भंडार है, परन्तु लोग गरीब हैं। 70 प्रतिशत लोग तो गरीबी की रेखा के नीचे रहते हैं।[12]

पाकिस्तान में बलूचों की हमेशा उपेक्षा ही की गई है। संघीय सरकार में उनका प्रतिनिधित्व नहीं के बराबर है। एक अध्ययन के अनुसार पाकिस्तान में 1947 से 1977 के मध्य गठित मंत्रिमण्डलों में कुल 179 केन्द्रीय मंत्री बनाये गये जिनमें से केवल 4 बलूच थे। एक अध्ययन ने यह दर्शाया कि सेना में अधिकारी स्तर पर 70 प्रतिशत पंजाबी, 15 प्रतिशत पठान, 10 प्रतिशत मुहाजिर तथा 5 प्रतिशत में बलूच एवं सिंधी लोग थे।[13] नौकरशाही में भी बलूचों को कोई महत्व नहीं दिया गया है। एक अध्ययन यह दिखाता है कि पाकिस्तान के ग्रेड-22 में 52 संघीय सचिव हैं जिनमें से 31 पंजाब, 11 पश्चिमोत्तर सीमाप्रांत, 9 सिंध तथा 1 आजाद कश्मीर से है, मगर बलूचों को यहाँ कोई प्रतिनिधित्व नहीं मिला है। दरअसल, पिछले दस वर्षों में लगातार यह कोशिश की गई है कि बलूचिस्तान और सिंध के लोगों को नौकरशाही में बिल्कुल जगह न दी जाए।[14] न्यायिक सेवा में भी इसी प्रकार की स्थिति है। उपरोक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि पाकिस्तान में बलूचों का सांस्थानिक बहिर्वेशन किया जा रहा है।

विकास के लिए धन का आवंटन भी गैर बलूची नौकरशाही के हाथों में है। विकास प्रशासन के क्षेत्र में स्थानीय लोगों की भागीदारी को नजरअंदाज कर दिया गया है। पंजाबियों ने बलूचिस्तान में आंतरिक उपनिवेश जैसा स्थापित कर लिया है। विकास के नाम पर बलूचिस्तान के प्राकृतिक संसाधनों का बेरहमी से शोषण किया जाता रहा है। विकास का कोई लाभ बलूचियों को नहीं मिला इसलिए अब वे विकास का ही विरोध करने लगे हैं। इस क्षेत्र के साथ अन्याय इस बात से सिद्ध होता है कि सुई गैस पाइपलाइन से जहाँ पाकिस्तान के दूसरे क्षेत्र लाभान्वित हो रहे थे वहीं यहाँ की जनता को इसका कोई लाभ नहीं मिल रहा है। बलूच नेताओं की यह शिकायत है कि प्रदेश की प्राकृतिक दौलत की आमदनी का 4-5 प्रतिशत भाग भी बलूचों के विकास पर खर्च नहीं होता है। वहाँ सड़कें, स्कूल, बैंक, सरकारी कल्याणकारी योजनाओं तथा यहाँ तक कि एक बड़े भाग में पीने का पानी भी नसीब नहीं होता है। 2005 में पुनः शुरू हुए बलूच विद्रोह की मुख्य मांगें प्रान्तीय स्वायत्तता, राष्ट्रीय संसाधनों का समान वितरण एवं बलूचों को मुख्यधारा में शामिल करना आदि हैं।

1957 में पख्तून, सिंधी, बलूच प्रजातियों ने मिलकर नेशनल अवामी पार्टी (एन.ए.पी.) का गठन किया जिससे वह प्रान्तीय स्वायत्तता प्राप्त कर सकें लेकिन अयूब के सैनिक शासन में राष्ट्र की अखण्डता के बोझ तले इसे दबाया गया। 1972 में बलूचिस्तान में नेशनल अवामी पार्टी एवं जमीअत–उलेमा–ऐ–इस्लाम की गठबंधन सरकार बनी परन्तु 1973 में भुट्टो की केन्द्रीय सरकार ने उसे बर्खास्त कर दिया[15] जिसके बाद 1973–77 तक बलूचिस्तान बगावत की आग में झुलसता रहा। इसी काल में बलूचिस्तान पीपुल्स लिबरेशन फ्रन्ट (BPLF) का निर्माण हुआ जिसने गोरिल्ला पद्धति से बलूचिस्तान की स्वतंत्रता के लिए लड़ना शुरू किया। सन् 2005 में बलूच स्वतंत्रता आन्दोलन का एक नया और हिंसक दौर शुरू हुआ। लम्बे समय तक चलने के बाद बलूचों विशेषकर बलूच लिबरेशन आर्मी एवं पाकिस्तानी फौज के बीच चल रहा युद्ध 2016 में समाप्त हुआ। यद्यपि न तो बलूच प्रजाति की समस्याएं समाप्त हुई हैं और न ही उनकी जायज मांगे पूरी हुई हैं। आज भी पाकिस्तान बलूच समस्या के चलते अपनी अखण्डता और एकता को लेकर आशंकित हैं।

सन् 1947 ई0 में भारत विभाजन के बाद, पाकिस्तान के अस्तित्व में आने के बाद भारत से पाकिस्तान जाने वाले

भारतीय मुसलमानों को पाकिस्तान में 'मुहाजिर' कहा जाता है। पाकिस्तान में उर्दू भाषी 'मुहाजिर' प्रजाति का अपना दर्द एवं आन्दोलन है। आरम्भ में पाकिस्तान में मुहाजिरों ने नौकरशाही में अपनी जनसंख्या से बहुत अधिक प्रतिनिधित्व पाया। उर्दू को देश की राजभाषा घोषित किया गया जबकि उर्दू भाषियों की संख्या लगभग 4 प्रतिशत ही थी। लियाकत अली सरकार द्वारा नागरिक सेवाओं में कोटा व्यवस्था लागू की गई उससे मुहाजिरों को लाभ ही मिला।[16] भारतीय पंजाब एवं बंगाल से पाकिस्तान जाने वाले लोग अपने प्रान्तीय समूहों में घुल-मिल गये थे। यू.पी. के मुहाजिरों को सिंध में बसाया गया जिसके कारण कराची तथा हैदराबाद का तीव्र आर्थिक विकास हुआ और औद्योगिक संस्थानों पर एक तरह से मुहाजिरों का आधिपत्य स्थापित हो गया। साथ ही पाकिस्तानी समाज के महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में इनका प्रतिनिधित्व अत्यधिक हो गया। जुल्फिकार भुट्टो के कार्यकाल में कोटा व्यवस्था में परिवर्तन तथा बैंकों, बीमा कम्पनियों एवं निजी क्षेत्र के उद्योगों के राष्ट्रीयकरण ने इस वर्ग के हितों को बहुत नुकसान पहुँचाया। 1970 के दशक की भुट्टो की नीतियों से बहुत से मुहाजिर असंतुष्ट हो गये। इन नीतियों को मुहाजिरों के विरूद्ध एवं सिंधियों के पक्ष में महसूस किया गया। 1972 में सिंध में उर्दू के साथ ही सिंधी को भी एक प्रान्तीय भाषा का दर्जा दे दिया गया। इन सब बातों से सिंधी-मुहाजिर प्रजातीय संघर्ष शुरू हुआ।[17] इस प्रजाति संघर्ष में बहुत बड़ी संख्या में लोग मारे गये और अनेक अवसरों पर कई – कई दिनों तक व्यावसायिक गतिविधियाँ ठप हो गयीं, जिससे पाकिस्तान का आर्थिक विकास बुरी तरह से प्रभावित हुआ।

सन् 1984 में जनरल जिया-उल-हक के प्रोत्साहन से उर्दू भाषी अल्पसंख्यकों ने मुहाजिर कौमी मूवमेंट (एमक्यूएम) नामक संगठन का निर्माण किया जिसका नेतृत्व अल्ताफ हुसैन ने किया और कराची को इसके अभियान का मुख्यालय बनाया गया।[18] शीघ्र ही यह मुहाजिरों की प्रतिनिधि पार्टी बन गयी। यह मुहाजिर हितों की रक्षा करने वाला एक क्रांतिकारी संगठन है जिसकी हिंसक झड़पें सिंधियों के साथ होती रहती हैं। मुहाजिर आन्दोलन का नेतृत्व मुहाजिर कौमी मूवमेंट के पास है। मुहाजिर 'मुहाजिर राष्ट्रवाद' की विचारधारा को स्वीकार करते हैं जो समान अधिकार एवं सामाजिक न्याय पर आधारित है।[19] 1980 एवं 1990 के दशक में मुहाजिरों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में सापेक्षिक गिरावट आई जिसने उर्दू भाषी समुदाय के सिंध के शहरी क्षेत्रों में लामबन्द होने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अनेक अवसरों पर अल्ताफ हुसैन ने कहा कि 'पाकिस्तान का बनना एक गलती थी।' जिससे यह स्पष्ट होता है कि पाकिस्तान की मांग करने वाले मुख्य वर्ग–मुहाजिरों की आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं हो पा रही है। सिंधी – मुहाजिर प्रजातीय संघर्ष ने सिंध एवं पाकिस्तान की आर्थिक राजधानी कराची में सामाजिक सद्भाव को पूरी तरह से छिन्न–भिन्न कर दिया।

पाकिस्तान में सिंधी प्रजाति के लोगों द्वारा सिंधी राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति हो रही है। 1936 में सिंध एक प्रान्त के रूप में गठित हुआ। वर्तमान में पाकिस्तान की 13 प्रतिशत आबादी सिंधी प्रजाति के लोगों की है। यह सिंध की त्रासदी है कि वहाँ की कुल आबादी में सिंधी आधे से भी कम हैं।[20] देश विभाजन के समय उर्दू भाषी 'मुहाजिर' बड़ी संख्या में पाकिस्तान गये जो मुख्य रूप से सिंध के शहरों में बसे और क्षेत्र के शहरों पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। मुहाजिरों ने, जो आर्थिक एवं शैक्षिक रूप से सिंधियों की तुलना में बेहतर स्थिति में थे, सिंधियों को प्रतिस्पर्धा से बाहर कर दिया। उन्होंने सरकारी सेवाओं एवं व्यवसायों पर कब्जा कर लिया।[21] 1981 में सिंध की राजधानी कराची में सिंधी बोलने वाले लोगों की संख्या केवल 6.3 प्रतिशत थी। यद्यपि सिंध पाकिस्तान का सर्वाधिक विकसित राज्य है लेकिन इसकी मूल आबादी उतनी ही अविकसित है। कराची के पाकिस्तान की वित्तीय राजधानी होने के कारण यद्यपि सिंध की प्रतिव्यक्ति आय पाकिस्तान में सबसे अधिक है किन्तु ग्रामीण जनता, जिसमें सिंधी लगभग 80 प्रतिशत हैं, देश के अत्यधिक गरीबों में शामिल हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार सिंधियों की जनसंख्या 11.77 प्रतिशत थी जबकि राजपत्रित पदों पर इनका अनुपात 2.7 प्रतिशत था जो बढ़कर 1983 में 5.1 प्रतिशत हो गया। सन् 1984 में चीफ मार्शल लॉ सचिवालय में 1445 अधिकारियों में मात्र 2 सिंधी थे जबकि संघीय सचिवालय के 2606 पदों में से केवल 77 सिंधी अधिकारियों के पास थे।

सिंध की प्रांतीय सरकार एवं संघीय शासन में अल्प प्रतिनिधित्व तथा सामाजिक–आर्थिक बहिर्वेशन आदि ने सिंधी लोगों में राष्ट्रवाद की भावना के विकास में सहायता की। जुल्फिकार अली भुट्टो ने सिंधी चेतना को निश्चित रूप देने में निश्चय ही बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने सिंधियों को नौकरियाँ तथा वित्तीय संसाधनों को उपलब्ध कराया।[22] इसीलिए सिंधियों द्वारा भुट्टो की फांसी को पंजाबी शासकों द्वारा सिंधी प्रधानमंत्री की हत्या के रूप में देखा गया। साथ ही जनरल जिया-उल-हक, जो कि एक मुहाजिर थे, द्वारा मुहाजिर आन्दोलन को खुला समर्थन देने से गहरे नाराज सिंधियों ने 1980 के दशक के मध्य में पाकिस्तान सरकार के साथ खुला युद्ध छेड़ दिया। पंजाबी बहुल सेना का सामना करने के लिए सिंधी गुरिल्ला सामने आये। राज्य द्वारा इस असंगठित एवं अनियोजित विद्रोह का दमन कर दिया गया। दमन किये जाने के बाद सिंधी राष्ट्रवाद बलूच राष्ट्रवाद के समान हो गया। खुली शत्रुता के समाप्त होने के बाद सिंधी आन्दोलन, इस्लामाबाद के विरूद्ध जनमत के रूप में शक्तिशाली हुआ।[23]

सिंधी प्रजातीय–राष्ट्रवाद अलग सिंधी पहचान पर आधारित है। सिंध के करिश्माई नेता गुलाम मुर्तजा सईद ने 1971 में जिए सिंध आन्दोलन चलाया, जो कि एक राजनीतिक आन्दोलन था। 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में सईद सिंध नेशनल एलायंस के निर्विवाद नेता थे परन्तु चुनावों में एलायंस कोई भी सीट नहीं जीत सकी जिससे सिंध से गैर सिंधियों को निकालकर एक अलग सिंध देश स्थापित करने का सईद का सपना हकीकत में नहीं बदल सका।[24] यद्यपि बहिर्वेशन एवं भेदभाव की वजह से सिंधी राष्ट्रवाद अभी भी अस्तित्व में है जिससे पाकिस्तान में राष्ट्र निर्माण की समस्या बनी हुई है।

जब पाकिस्तान अस्तित्व में आया, तब वह दो भागों में विभक्त था – पहला पश्चिमी पाकिस्तान एवं दूसरा पूर्वी पाकिस्तान। पश्चिमी पाकिस्तान में पंजाबी, पख्तून, सिंधी, बलूच एवं मुहाजिर आदि प्रजातियाँ निवास करती थीं वहीं पूर्वी पाकिस्तान में बंगाली प्रजाति रहती थी। 1948 में पूर्वी पाकिस्तान की जनसंख्या 54 प्रतिशत होते हुए भी लोक सेवा में इनका प्रतिनिधित्व 11.1 प्रतिशत रहा जबकि 88.9 प्रतिशत पश्चिमी पाकिस्तान से था। नयी भर्ती नीति से इसमें कुछ सुधार अवश्य हुआ, जैसे 1958 में बंगालियों का प्रतिशत 41.1 तक हुआ फिर भी वरिष्ठ पद पश्चिमी पाकिस्तान के हाथ में रहे। उदाहरण के लिए, 1955 में संघीय सरकार में 19 सचिवों में से एक भी बंगाली नहीं था। 41 संयुक्त सचिवों में से केवल 3 पूर्वी पाकिस्तान से थे। इसी प्रकार 133 उपसचिवों में 10 तथा 548 अवर सचिवों में 38 बंगाली थे। सैन्य अधिकारियों में भी बंगालियों का प्रतिनिधित्व बहुत कम रहा। थल सेना के 894 अधिकारियों में 14, नौसेना के 593 अधिकारियों में 7 तथा वायुसेना के 640 अधिकारियों में केवल 60 बंगाली थे।[25] 1954 मे वन–यूनिट स्कीम बंगालियों के बहुमत को कम करने के लिए चलाई गई। इसने पश्चिमी क्षेत्र के अन्य सामाजिक समूहों को और क्षति पहुँचाई। उर्दू मात्र 3.7 प्रतिशत जनता की भाषा थी परन्तु इसे राजभाषा के रूप में पूरे पाकिस्तान पर थोप दिया गया। बंगाली, सिंधी आदि भाषाओं का विकास रोका गया। इसके प्रतिक्रिया स्वरूप बंगाली भाषा आन्दोलन आरम्भ हुआ और 21 फरवरी, 1952 को कुछ कार्यकर्त्ताओं को ढाका में पुलिस ने मार डाला। यह दिन पंजाबी–प्रभुत्त्व वाले पश्चिमी पाकिस्तानी शासक अभिजन के विरूद्ध प्रतिरोध का प्रतीक बन गया।[26] पहला आम चुनाव 1970 में ही हो सका परन्तु इसके परिणामों के अनुसार बंगाली नेता शेख मुजीब को सत्ता हस्तांतरण नहीं हुआ। प्रजातीय–भाषायी भेदभाव, दमन एवं शोषण ने बंगाली प्रजाति के लोगों मे तीव्र असन्तोष की भावना का विकास किया। पूर्वी पाकिस्तान में बंगालियों के प्रजातीय आन्दोलन का परिणाम अन्ततः 1971 में पाकिस्तान के विभाजन एवं बांग्लादेश के बनने के रूप में सामने आया।

श्रीलंकाई समाज भी बहुप्रजातीय, बहुधार्मिक एवं बहुसांस्कृतिक है। सिंहली एवं तमिल वहाँ की दो प्रमुख प्रजातियाँ हैं। सन् 1948 ई0 में स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ ही श्रीलंका में लोकतंत्र की स्थापना हुई। 'मात्र सिंहला अधिनियम 1956', जिसके माध्यम से सिंहली प्रजाति की भाषा सिंहला को देश की राष्ट्रीय भाषा घोषित करते हुए उसे प्रत्येक नागरिक के लिए अनिवार्य बना दिया गया। इस फैसले से श्रीलंका की सिंहली एवं तमिल जातीय समस्या और भी जटिल हो गयी। मात्र सिंहला अधिनियम 1956 ने सिंहलियों एवं तमिलों के मध्य शत्रुता पैदा की।[27] श्रीलंका के पहले तमिल विरोधी दंगे की चिंगारी इसी अधिनियम से आयी। बौद्ध सिंहलियों के पुनरूत्थानवादी आन्दोलन ने सिंहली–तमिल जातीय समस्या को बहुत अधिक बढ़ाया। भाषायी भेदभाव के कारण प्रजातीय समस्या लगातार उग्र होती गयी और कालान्तर में सन् 1983 ई0 से वहाँ पर राज्य एवं तमिल संगठन–लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम के मध्य गृहयुद्ध शुरू हो गया। गृहयुद्ध सन् 2009 ई0 तक चला, जिसकी बहुत बड़ी कीमत राज्य एवं श्रीलंकाई जनता को चुकानी पड़ी। प्रजातीय बहुसंख्यकवाद की नीति ने श्रीलंका में एक प्रकार से लोकतंत्र को असफल बना दिया है। गृहयुद्ध की समाप्ति के उपरांत भी श्रीलंका में प्रजातीय समस्या का समाधान और तमिल प्रजाति की आकांक्षाओं की पूर्ति होना शेष है।

नेपाल में 1990 ई0 में बहुदलीय लोकतंत्र की स्थापना के साथ ही ?पहचान की राजनीति' का उदय हुआ। सामाजिक, आर्थिक न्याय के लिए जनता के विभिन्न वर्गो (विशेषकर प्रजातीय समूहों) ने मांगो एवं आन्दोलन को आरम्भ किया।[28] देशज राष्ट्रीयताओं (आदिवासी) ने राज्य से अपने हक मांगने के लिए सन् 1996 में ?नेपाल फेडरेशन ऑफ नेशनलिटीज' एवं सन् 2003 में ?नेपाल फेडरेशन ऑफ इन्डिजनस' का निर्माण किया। मधेशी एक क्षेत्रीय सामुदायिक समूह है। सामाजिक अन्याय से अत्यधिक पीड़ित इस समूह ने एक समय अपने लिए एक प्रान्त का नारा दिया था ? ?एक मधेश, एक प्रदेश' जिसे कि आत्म निर्णय का भी अधिकार प्राप्त हो। दलित एवं मुस्लिम समुदाय भी वहाँ पर बहिर्वेशित समूह रहे हैं। सन् 2008 में लोकतांत्रिक गणतंत्र की स्थापना के बाद से वहाँ पर सामाजिक न्याय हेतु विभिन्न कदम उठाये गये। नेपाल का वर्तमान संविधान, 2015 भी नेपाल की प्रजातीय समस्या का समाधान करने में असफल रहा है। इसमें भी प्रजातीय भेदभाव को विभिन्न स्तरों पर बनाए रखा गया है जिसकी वजह से इसके लागू होने के पूर्व ही नेपाल में मधेशी समुदाय ने इसे लागू करने का हिंसात्मक विरोध शुरू कर दिया था। कुछ समस्याओं का समाधान होने के बावजूद अभी भी नेपाल में प्रजातीय समस्या बनी हुई है।

भारत विशाल क्षेत्रफल एवं जनसंख्या के साथ ही एक बहुल समाज भी रखता है। यहाँ बड़ी संख्या में जातियाँ, अनेक धर्म, भाषा एवं सांस्कृतिक तथा प्रजातीय समूह एक साथ रहते हैं। समकालीन वर्षों में भारत प्रजातीय तनाव एवं संघर्षों का गवाह रह चुका है। भारत में प्रजातीय पहचान एवं समस्या के मुख्य रूप इस प्रकार रहे हैं [29] – 1– **भाषायी प्रजातियता** – तमिलनाडु का द्रविड़ आन्दोलन इसका सबसे बेहतरीन उदाहरण है। 2– **धार्मिक अभिकथन एवं साम्प्रदायिकत्ता** – हिंदू, मुस्लिम दंगे एवं भारत का विभाजन इसका उदाहरण है। 3– **जनजातीय आन्दोलन** – यह आन्दोलन ब्रिटिश काल से ही चल रहा है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद आदिवासी पहचान आन्दोलन देश के विभिन्न भागों में चल रहा है इसका एक महत्त्वपूर्ण आयाम यह है कि इसे प्रजातीय परिस्थितिकीय आन्दोलन के नाम से पुकारा जाता है जिसमें आदिवासी न केवल जंगल एवं पारिवारिक भूमि से स्वयं के विस्थापन के विरूद्ध लड़ रहे हैं बल्कि अपने प्राकृतिक आवासों के परिस्थितिक विनाश के विरूद्ध भी लड़ रहे हैं। भारत में माओवादी हिंसा, जिसे नक्सलवाद भी कहा जाता है, जनजातीय आन्दोलन का ही उदाहरण है। 4– **प्रजातीय राष्ट्रवाद** – कश्मीर में अलगाववादी आन्दोलन, सन् 1970 एवं 80 के दशक का पंजाब का सिक्खों का खालिस्तान आन्दोलन एवं पूर्वोत्तर भारत का नागा आन्दोलन इत्यादि इसके मुख्य उदाहरण हैं। 5– **भारत में क्षेत्रवाद एवं जातिवाद भी प्रजातीय समस्या के रूप हैं** – झारखण्ड आन्दोलन, तेलंगाना आन्दोलन इत्यादि क्षेत्रवाद के प्रमुख उदाहरण हैं। प्रजातीय समस्या ने समय–समय पर भारतीय लोकतंत्र एवं राष्ट्रीय एकता तथा अखण्डता के समक्ष गंभीर संकट उत्पन्न किया है।

पाकिस्तान की प्रजातीय समस्या का एक महत्त्वपूर्ण परिणाम दिसम्बर 1971 से पूर्वी पाकिस्तान का बांग्लादेश के रूप में अस्तित्व में आना है। बांग्लादेश में मुख्यतः बंगाली प्रजाति के लोग रहते हैं। 98 प्रतिशत लोग बांग्ला भाषी हैं। जनता का 86 प्रतिशत इस्लाम, 13 प्रतिशत हिंदू एवं 1 प्रतिशत अन्य धर्मो के अनुनायी हैं जिसमें चटगाँव पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले चकमा भी हैं। धार्मिक अन्तर के बावजूद मुसलमान एवं हिंदू एक ही प्रजातीय समूह बंगाली तथा भाषायी समूह–बांग्ला के सदस्य हैं। चकमा, जो अधिकतर बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं, को शासन की भूमि, अर्थ तथा बंगालियों (विशेषकर मुस्लिमों) को चटगाँव क्षेत्र में बसाने की नीति से पहचान की समस्या आंरम्भ हुई। इससे चकमा शरणार्थी समस्या शुरू हुई क्योंकि बड़ी संख्या में चकमा लोग भागकर भारतीय प्रदेश त्रिपुरा आ गये। सन् 1997 में भारत के प्रयासों से दोनों पक्षों में समझौता सम्पन्न हुआ, परन्तु शासन ने इसके विभिन्न प्रावधानों को लागू ही नहीं किया।[30] सन् 2008 से पुनः चकमा जनजाति के लोगों एवं घरों पर बांग्ला भाषियों के द्वारा हमला एवं आगजनी शुरू हो गयी। पहाड़ियाँ बांग्लादेश के उत्तरी भाग में रहने वाली एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आदिम प्रजाति है। ये लोग भी विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना कर रहे हैं। अगर सरकार समय रहते इनके हित में कदम नहीं उठाती, तो यह आदिम प्रजाति विलुप्त हो जायेगी।

निष्कर्ष

दक्षिण एशियाई देशो में प्रजातीय समस्या एक ज्वलंत समस्या है। क्षेत्र के पाँचों प्रमुख देश इसका सामना कर रहे हैं। दक्षिण एशियाई देशों ने इसकी बहुत बड़ी मानवीय एवं आर्थिक कीमत चुकाई है। श्रीलंका में लगभग तीन दशक तक चले गृहयुद्ध का मुख्य कारण प्रजातीय समस्या ही थी। इसी ने श्रीलंका को विभाजन के कगार पर पहुँचा दिया था। भारत, नेपाल एवं बांग्लादेश भी प्रजातीय समस्या के शिकार रहे हैं। पाकिस्तान प्रजातीय रूप से बहुत ही विविधतापूर्ण है। यद्यपि मुहम्मद अली जिन्नाह ने 'मुस्लिम राष्ट्रवाद' पर बल दिया परन्तु पाकिस्तान के अस्तित्व में आने के कुछ समय बाद से ही प्रजातीय समस्या शुरु हो गई। पाकिस्तान में प्रजातीय समस्या ने वहाँ पर राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया को गम्भीर क्षति पहुँचाई। पाकिस्तान का विभाजन एवं बांग्लादेश का बनना पाकिस्तान में प्रजातीय समस्या की गहराई को दर्शाता है। बलूच आन्दोलन, मुहाजिर आन्दोलन एवं सिंधी आन्दोलन पाकिस्तान की राष्ट्रीय एकता के लिए गम्भीर संकट हैं। पाकिस्तान की गंभीर प्रजातीय राष्ट्रवाद की समस्या ने वहाँ के सामाजिक–राजनीतिक जीवन को तनावपूर्ण एवं संघर्षमय बना दिया है। प्रजातीय एवं भाषायी भेदभाव तथा बहिर्वेशन, राजकीय सेवाओं में अल्प–प्रतिनिधित्व एवं संघीय शासन की संस्थाओं विशेषकर अति प्रभावशाली संस्था, सेना में पंजाबियों का प्रभुत्त्व, प्रान्तीय स्वायत्तता एवं राष्ट्रीय संसाधनों के समान वितरण की मांग एवं सामाजिक न्याय की चाहत ने देश को अशांति एवं एक परोक्ष गृह युद्ध के दौर में धकेल दिया है। इन परिस्थितियों ने पाकिस्तान में लोकतंत्र एवं उसकी संस्थाओं को कमजोर किया है तथा राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता के नाम पर सैनिक नेतृत्व को शक्तिशाली बनाया है। पाकिस्तान एक बहु प्रजातीय देश है जहाँ पर लोकतंत्र को सशक्त बनाने के लिए स्वायत्त प्रान्तों का एक संघ स्थापित करना चाहिए।

सन्दर्भ सूची

1. विस्तृत अध्ययन के लिए देखें, फड़निस, उर्मिला एवं रजत गांगुली, 'एथनिसिटी एण्ड नेशन-बिल्डिंग इन साउथ एशिया', सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, संस्करण 2001.
2. फड़निस, उर्मिला एवं रजत गांगुली, 'एथनिसिटी एण्ड नेशन-बिल्डिंग इन साउथ एशिया', सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली,संस्करण 2001, पृ 68–70.
3. कुक्रेजा, वीना, कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 126.
4. बलूचिस्तान की प्रजातीय समस्या एवं अलगाववाद को समझने के लिए देखें, खान, अदील, 'पॉलिटिक्स ऑफ आईडेनटिटी : एथनिक नेशनलिज्म एण्ड स्टेट इन पाकिस्तान', सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005, पृ 109-126.
5. कुक्रेजा, वीना, 'कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस', सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 131.
6. पेडणेकर, सतीश, 'बलूचिस्तान की बगावत,' जनसत्ता, 14 फरवरी 2006, पृ 6.
7. पेडणेकर, सतीश, 'बलूचिस्तान की बगावत,' जनसत्ता, 14 फरवरी 2006, पृ 6.
8. अली, तारीक, 'कैन पाकिस्तान सर्वाइव : द डेथ ऑफ अ स्टेट', पेंगुइन, हरमोंडस वर्थ, 1983, पृ 119.
9. 'बलूच आग', संपादकीय, नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली, 29 अगस्त 2006.
10. खान, अदील, 'पाकिस्तान इन 2006 : सेफ सेन्टर, डेन्जरस पेरिफेरिज', एशियन सर्वे, भाग 47, अंक 1, जनवरी / फरवरी 2007, पृ 126.
11. उपरोक्त, पृ 126.
12. पेडणेकर, सतीश, 'बलूचिस्तान की बगावत,' जनसत्ता, 14 फरवरी 2006, पृ 6.
13. कुक्रेजा, वीना, कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 132–133.
14. पेडणेकर, सतीश, 'बलूचिस्तान की बगावत,' जनसत्ता, 14 फरवरी 2006, पृ 6.
15. विस्तार के लिए देखें, अख्तर, असीम सज्जाद, 'बलूचिस्तान वर्सेस पाकिस्तान', इकोनॉमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, भाग 42, अंक 45-46, नवंबर 10-23, 2007, पृ 73-79.
16. खान, अदील, 'पॉलटिक्स ऑफ आईडेनटिटी : एथनिक नेशनलिज्म एंड द स्टेट इन पाकिस्तान', सेज, नई दिल्ली, 2005, पृ 167.
17. विस्तार से देखें, जैदी, एस. अकबर, 'सिंधी वर्सेस मोहाजिर : कन्ट्राडिक्सन, कॉनफिलिक्ट, कम्प्रोमाइज', इकोनॉमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, भाग 26, संख्या 20 (18 मई 1991) पृ 1295-1302.
18. देखें, खान, अदील, पॉलटिक्स ऑफ आईडेनटिटी : एथनिक नेशनलिज्म एंड द स्टेट इन पाकिस्तान, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005, पृ 174–80.
19. कुक्रेजा, वीना, कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 146.
20. बहादुर, कलीम, 'इथनिक प्रॉबल्मस इन पाकिस्तान', वर्ल्ड फोकस, भाग XV, अंक 4-5, अप्रैल-मई 1994.
21. कुक्रेजा, वीना, 'कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस', सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 138–140.
22. जैदी, एस. अकबर, वही, पृ 1297.
23. हर्सट, सी.डी., 'पाकिस्तान्स एथनिक डिवाइड', स्टडीज इन कॉन्फलिक्ट एण्ड टेरोरिज्म, भाग XIX, 1996.
24. कुक्रेजा, वीना, कॅनटेम्परेरी पाकिस्तान : पोलेटिकल प्रोसेसेस, कॉनफ्लिक्ट्स एण्ड क्राइसेस, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003, पृ 142–143.
25. जहान, रौनक, ' पाकिस्तान : फेल्योर इन नेशनल इन्टीग्रेसन', कोलम्बिया यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 1972, पृ 25.
26. रहमान, तारिक, 'लैंग्वेज एण्ड एथनिसिटी इन पाकिस्तान', एशियन सर्वे, भाग– 37 अंक–9, सितम्बर 1997, पृ 836.
27. उयगोंड़ा, जयदेवा, ?श्रीलंका इन 2009 : फ्राम सिविल वार टू पोलिटिकल अनसर्टेनिरीज' , एशियन सर्वे, भाग 50, अंक 1, जनवरी / फरवरी 2010, पृ 104–111. .
28. विस्तार से देखें, लावोटी, महेन्द्र,?टुवर्ड्स ए डेमोक्रेटिक नेपाल : इनक्लूजिव पॉलिटिकल इन्स्टीट्यूशन फार ए मल्टीकल्चरल सोसाइटी' , सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2005, पृ 87–112.
29. देखें प्रिया, आर्य, ?एथनिसिटी इन पोस्ट–इन्डेपेन्डेन्ट इण्डिया : अ सोशियोलॉजिकल पर्सपेक्टिव ऑन इट्स कॉजेज एण्ड मेनिफेसटेशन' , आईओएसआर जर्नल ऑफ ह्यूमनिटीज एण्ड सोशल साइंस, भाग 21, अंक 1, संस्करण 5, (जनवरी 2016) पृ 56 – 61.
30. देखें सलाम, मोहम्मद फखरूस एवं अक्तर, हजेरा, ?ऐथनिक प्राबल्म्स इन बांग्लादेश : अ स्टडी ऑफ चटगॉव हिल ट्रैक्ट्स' , एसयूएसटी जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज, भाग 22, अंक 2, 2014, पृ 56–63.